अण हूंदो संसारु, कलिपत करे सिधि थियो,
जिएं सुपने में सिधि थियो, नाना विधि वहिंवारु,
समुझी ड्रिसु सामी चए, करे सुधु वीचारु,
त अविद्या जो अहंकारु, मिटी वञेई मन मों.

सामीजी इस श्लोक में कहते हैं, जो जगत् मूलरूप में है ही नहीं, वह भ्रम के कारण प्रतीत होता है। यह इस प्रकार भासमान प्रतीत होता है जिस तरह सपने के सभी व्यवहार सच्चे लगते हैं। वस्तुतः वे सच्चे नहीं होते। सामीजी कहते हैं कि हे मनुष्य तुम शुद्ध विचार कर यह समझने का प्रयत्न करो। सद्विवेक से विचार करने पर ही तुम्हारे मन से अविद्या/अज्ञान का अहंकार नष्ट हो जायेगा।

परब्रह्म सर्वव्यापक, सूक्ष्म एवं शाश्वत है। यह सारा दृश्य जगत परमेश्वर से ही निर्माण हुआ है और अंत में उसी में ही विलीन हो जाने वाला है। परब्रह्म या परमात्मा सृष्टि निर्माण होने के पहले भी था। उसके पूर्व सृष्टि नहीं थी। सृष्टि परब्रह्म की कल्पना द्वारा निर्मित है। जो सृष्टि पहले थी ही नहीं, वह परमेश्वर ने रची है। जिसका अस्तित्व नहीं है, वह अविद्या है। परमात्मा, जीव और जगत् के पारस्परिक संबंध के प्रति अज्ञान को अविद्या कहा जाता है। अविद्या आत्म-स्वरूप के ऊपर आवरण डाल देती है। इसी अविद्या के कारण से ही मोह, मान, राग, द्वेष, संशय आदि सब बाँधने वाले बंधन मनुष्य को बहुत पीड़ित करते हैं। अविद्या अनादि शक्ति है, जो संसार के आरंभ से ही चेतन पर आवरण रूप से पड़ी हुई है अर्थात् ज्ञान के स्वरूप पर पर्दा डालकर यह अविद्या उस जीव स्वरूप को ढक देती है। जिसके कारण से मनुष्य उसका स्वरूप पाने के लिए न जाने क्या-क्या सोचता रहता है। सांसारिक बंधनों को पहचानकर उन्हें त्यागने का प्रयत्न करना और अंत में अविद्या रूपी बंधन को भी छोड़ देना, यही मुक्ति रूप परम पद की प्राप्ति है। सामीजी इसी अविद्या के अहंकार को नष्ट कर डालने की बात करते हैं, जो यथार्थ है।

■